IJHCE
ESTD: 2025
International Journal of Humanities, Commerce and Education
©PIJMS | Volume 1 | Issue 4 | December 2025 | ISSN: 3108-0456 (Online)
Available online at: https://ijhce.com/
DOI: https://doi.org/10.59828/ijhce.v1i4.22

प्रभा खेतान का रचना–संसार और स्त्री विमर्श की दार्शनिक सैद्धांतिकी

प्रो0 अनुपमा चतुर्वेदी[1], प्रीति सिंह[2]

[1]प्रोफेसर (हिन्दी) विभागाध्यक्ष, नारायण महाविद्यालय, शिकोहाबाद (उ0प्र0)
[2]असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी), डी0ए0वी0, पी0जी0 कॉलेज, आजमगढ़ (उ0प्र0)
[2]**Email:** neetun323@gmail.com

Received: 09 December 2025 | **Accepted:** 25 December 2025 | **Published:** 30 December 2025

Abstract (सारांश)

प्रस्तुत शोध पत्र समकालीन हिंदी साहित्य की प्रखर लेखिका प्रभा खेतान के समग्र रचना–संसार में निहित नारीवादी वैचारिकी, सामाजिक–सांस्कृतिक प्रतिरोध और स्त्री विमर्श की दार्शनिक सैद्धांतिकी का एक गहन विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। प्रभा खेतान का वैचारिक मानस केवल किताबी ज्ञान तक सीमित न होकर ज्यां–पाल सार्त्र के अस्तित्ववाद, सिमोन द बोउवार के स्त्रीवादी दर्शन और स्वयं के भोगे हुए कटु यथार्थ से निर्मित हुआ है। उन्होंने पारंपरिक 'मौन के सौंदर्यशास्त्र' को पूरी तरह नकारते हुए स्त्री की वास्तविक मुक्ति के लिए आर्थिक स्वावलंबन और देह पर आत्मनिर्णय के अधिकार को दार्शनिक मूलाधार माना है।

इस अध्ययन के अंतर्गत लेखिका के प्रमुख उपन्यासों 'पीली आँधी', 'छिन्नमस्ता', 'अपने–अपने चेहरे' और 'आओ पेपे घर चलें' के साथ–साथ उनकी बहुचर्चित आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' के अंतःसंबंधों की पड़ताल की गई है। शोध पत्र यह रेखांकित करता है कि किस प्रकार खेतान ने कलकत्ता के मारवाड़ी व्यापारिक समाज की भौतिक व मानसिक घुटन, खोखले दोहरे मापदंडों, बाल विवाह, अनमेल विवाह तथा विवाह एवं दहेज जैसी संस्थाओं के भीतर निहित पितृसत्तात्मक और पूंजीवादी गठजोड़ का दार्शनिक विखंडन किया है। इसके अतिरिक्त, यह आलेख पारिवारिक संरचना के भीतर होने वाले बाल यौन शोषण, संबंधों के अलगाव–बोध तथा स्त्री की जैविक व मनोवैज्ञानिक आकांक्षाओं जैसे साहसिक विषयों पर प्रकाश डालता है।

मुख्य बिंदु : *प्रभा खेतान, रचना–संसार, स्त्री विमर्श, दार्शनिक सैद्धांतिकी, अस्तित्ववाद, आर्थिक स्वावलंबन, देह–विमर्श, छिन्नमस्ता, मारवाड़ी समाज, विश्व–भगिनीवाद*

प्रस्तावना-

प्रभा खेतान की वैचारिकी का निर्माण केवल किताबी ज्ञान या सतही साहित्यिक प्रवृत्तियों से नहीं हुआ है, बल्कि उनके भोगे हुए कटु यथार्थ और वैश्विक दार्शनिक चिंतनों– विशेषकर अस्तित्ववाद और मार्क्सवाद के गहन और सूक्ष्म अध्ययन से हुआ है। उनके वैचारिक मानस के निर्माण में ज्यां–पाल सार्त्र के अस्तित्ववाद और सिमोन द बोउवार के नारीवादी दर्शन का अत्यंत स्पष्ट और गहरा प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने समाज में स्त्री की दोयम दर्जे की स्थिति को न केवल एक सांस्कृतिक या धार्मिक दृष्टिकोण से देखा, बल्कि उसे एक अत्यंत स्पष्ट आर्थिक, राजनीतिक और सत्तात्मक संरचना के परिणाम के रूप में विश्लेषित किया।

प्रभा खेतान का यह स्पष्ट और निर्भीक मानना था कि स्त्री का संघर्ष दूसरों पर निर्भर रहकर या पुरुषों से दया की भीख मांगकर कभी नहीं जीता जा सकता। उन्होंने 'मौन के सौंदर्यशास्त्र' को पूरी तरह से नकार दिया, जिसे सदियों से उच्च और मध्यवर्गीय स्त्रियों पर 'आदर्श नारी' के नाम पर थोपा गया था। उनके अनुसार, स्त्री को अपनी मुक्ति

का दुर्गम मार्ग स्वयं प्रशस्त करना होगा। उनके काव्य–संग्रह 'अहल्या' की निम्नलिखित पंक्तियाँ उनके सम्पूर्ण औपन्यासिक साहित्य के केंद्रीय दर्शन को अत्यंत प्रखरता से प्रतिध्वनित करती हैंः–

"उठो मेरे साथ मेरी बहन !
छोड़ दो, किसी और से मिली मुक्ति का मोह!
तोड़ दो, शापग्रस्ता की कारा तुम अपना उत्तर स्वयं हो अहल्या!
ग्रहण करो वरण की स्वतंत्रता" ।

यह ज्वलंत आह्वान केवल एक काव्यात्मक उद्गार या भावुकता नहीं है, बल्कि यह उनके उपन्यासों की प्रमुख नायिकाओं जैसे 'अपने–अपने चेहरे' की रमा, 'छिन्नमस्ता' की प्रिया, और 'पीली आँधी' की सोमा के जीवन का मूल मार्गदर्शक सिद्धांत है।[1]

This is an open access article under the Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License.

मारवाड़ी समाज की सांस्कृतिक जड़ता और रूढ़ियों का औपन्यासिक विखंडन

प्रभा खेतान स्वयं कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) के एक अत्यंत संपन्न, कुलीन और पारम्परिक मारवाड़ी व्यवसायिक परिवार से संबंध रखती थीं। उन्होंने इस समाज की घुटन भरी बंदिशों, इसके खोखले दोहरे मापदंडों और इसके भीतर स्त्री के वस्तुकरण को अत्यंत निकटता से भोगा और देखा था। यही कारण है कि 'पीली आँधी' और 'छिन्नमस्ता' जैसे कालजयी उपन्यासों में उन्होंने परंपरा और धर्म की चादर ओढ़े मारवाड़ी समाज पर तीखे और निर्मम प्रहार किए हैं।

कलकत्ता का 'बड़बाजार' क्षेत्र मारवाड़ी व्यापारिक समाज का हृदय स्थल माना जाता है, परंतु प्रभा खेतान ने 'पीली आँधी' (1996) उपन्यास में इस क्षेत्र का जो निर्मम और यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत किया है, वह इस समाज के सांस्कृतिक पतन और घुटन का साक्षात प्रमाण है। बड़बाजार का जीवन जहाँ एक ही छोटे से कमरे में परिवार की कई पीढ़ियाँ अत्यंत अमानवीय और घुटन भरी परिस्थितियों में रहती हैं, इसे उपन्यास में 'नरक' की संज्ञा दी गई है। उपन्यास का एक पात्र इस नग्न यथार्थ को बयां करते हुए कहता है कि–'बड़े बेटे की शादी होने पर उसी कमरे में पर्दा डालकर एक और कमरा बना लिया जाता है' और 'हर सुबह हाथ में लोटा लिए शौचालय के बाहर कतार में खड़ा होना पड़ता है... जहाँ चारों ओर सड़न की बदबू है।'

इस भयावह भौतिक घुटन के समानांतर एक अत्यंत गहरी मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक घुटन भी मारवाड़ी परिवारों में व्याप्त है, जो विशेषकर स्त्रियों के जीवन को और अधिक नारकीय और अस्तित्वहीन बना देती है।

विवाह संस्था का यथार्थ –

भारतीय समाज में विवाह को एक पवित्र, अटूट और दैवीय संस्था माना जाता है, परंतु स्त्रीवादी दृष्टिकोण से यह संस्था अक्सर स्त्री के सबसे बड़े शोषण का प्राथमिक केंद्र सिद्ध होती है। मारवाड़ी समाज में धन, व्यापारिक गठजोड़ों और झूठी प्रतिष्ठा के आधार पर विवाह तय करने की एक लंबी और क्रूर परम्परा रही है, जहाँ स्त्री की व्यक्तिगत इच्छा, शिक्षा या वर–वधू के मध्य मानसिक सामंजस्य का कोई स्थान नहीं होता। प्रभा खेतान ने अपने उपन्यासों में विवाह संस्था की इस क्रूर विडंबना को अत्यंत बेबाकी से उकेरा है।''[2]

'अपने–अपने चेहरे' (1996) उपन्यास में मिस्टर गोयनका का विवाह उनके बड़े भाई के पारिवारिक दबाव में एक मात्र चौदह वर्षीय अबोध बालिका (सरला) से कर दिया जाता है, जो आयु, समझ और शारीरिक विकास के हर पैमाने पर पूरी तरह से एक बेमेल विवाह है। मिस्टर गोयनका अपनी नवविवाहिता पत्नी को सुहागरात के दिन ही यह निर्मम सत्य स्पष्ट कर देते हैं कि–''यह विवाह मेरी मर्जी के खिलाफ हुआ है। बेमेल, बिलकुल बेमेल''।

यह अमानवीय स्थिति एक नवयौवना स्त्री को जीवन भर के लिए एक ऐसी यंत्रणा और मानसिक संत्रास में धकेल देती है जहाँ वह 'पति–पत्नी और वह' के त्रासद त्रिकोण में उलझकर अपने वजूद को मिटते हुए देखने के लिए विवश हो जाती है।[3]

इसी प्रकार उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'छिन्नमस्ता' (1993) में भी यह रूढ़ि उजागर होती है। गुप्ता हाउस की अत्यंत सुंदर, सुशील और ''दूध–सी परी'' कन्या सरला का विवाह केवल वर पक्ष की अथाह अमीरी और व्यापारिक रसूख के कारण एक काले और कुरूप लड़के से कर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त, स्वयं गुप्ता जी अपनी खोखली व्यापारिक दोस्ती को निभाने के चक्कर में अपने ही बेटे का विवाह भी एक ऐसी लड़की से कर देते हैं जो उसके लिए बौद्धिक और मानसिक रूप से उपयुक्त नहीं है, जिसके परिणामस्वरूप उस युवक का 'नर्वस ब्रेकडाउन' हो जाता है।

बाल विवाह और अनमेल विवाह का सबसे वीभत्स रूप 'पीली आँधी' उपन्यास में उभरकर सामने आता है। इस उपन्यास में माधो नामक पात्र का विवाह एक दस वर्ष की बालिका से कर दिया जाता है। बाल–विवाह की यह रूढ़ि इतनी क्रूर है कि माधो पहले ही दिन अपनी उस अबोध पत्नी को पत्नी मानने से खारिज कर देता है। बाद में जब माधो की दूसरी शादी पद्मावती से होती है, तो वह विवाह भी पद्मावती के लिए पूर्णतः बेमेल, अरुचिकर और यातनादायी सिद्ध होता है।[4]

इन मार्मिक प्रसंगों के माध्यम से प्रभा खेतान यह अकाट्य सत्य स्थापित करती हैं कि विवाह नामक संस्था वास्तव में पितृसत्ता और पूंजीवाद का एक ऐसा क्रूर गठजोड़ है जहाँ स्त्री केवल एक विनिमय की वस्तु है। दहेज प्रथा, जिसने स्त्री के जन्म को ही एक अभिशाप और आर्थिक बोझ बना दिया है, खेतान के उपन्यासों में तीखे और वैचारिक प्रतिरोध का विषय रही है।

पारिवारिक संरचना के भीतर यौन, शारीरिक और मनोवैज्ञानिक शोषण का यथार्थ

'छिन्नमस्ता' उपन्यास की मुख्य नायिका प्रिया अपने ही घर में, अपने ही सगे संबंधियों के बीच सुरक्षित नहीं है। उसका अपने ही घर में अपने सगे बड़े भाई द्वारा शारीरिक, मानसिक और यौन शोषण किया जाता है। यह प्रसंग भारतीय रूढ़िवादी समाज के उस सबसे गहरे, काले और कड़वे सत्य को निर्भीकता से उजागर करता है जिस पर सामान्यतः बात करने से लोग कतराते हैं–घर के सुरक्षित माहौल

के भीतर होने वाला बाल यौन शोषण। इसके पश्चात, जब प्रिया का विवाह हो जाता है, तो उसका पति नरेंद्र भी उसके स्वाभिमान को कुचलते हुए उसका अनवरत मानसिक और भावनात्मक शोषण करता है। तमाम कोशिशों, समर्पण और समझौतावादी प्रवृत्तियों के बावजूद प्रिया अपनी ससुराल में स्वयं को एकदम बेघर और एक मशीन का निर्जीव पुर्जा मात्र महसूस करती है, जहाँ उसे लगता है कि वह केवल एक पुरुषवादी ''व्यवस्था में विसर्जित होकर रह गई है''[5] ।

हजारों वर्षों की पारंपरिक और दमनकारी मानसिकता ने स्त्री को मनोवैज्ञानिक रूप से इस कदर संकुचित कर दिया है कि जब वह आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो भी जाती है, तब भी मनोवैज्ञानिक स्तर पर वह गहरे एकाकीपन का शिकार रहती है।

आर्थिक स्वावलंबन और मुक्ति का संघर्ष–

प्रभा खेतान के उपन्यासों में पितृसत्ता और रूढ़ियों के प्रतिरोध का सबसे महत्वपूर्ण, व्यावहारिक और क्रान्तिकारी आयाम 'आर्थिक स्वावलंबन' है। वे एक सफल व्यवसायी होने के नाते यह भली–भांति समझती थीं कि जब तक स्त्री आर्थिक रूप से पुरुष पर (पिता, पति या पुत्र के रूप में) निर्भर है, तब तक उसके सारे विद्रोह, उसकी सारी सैद्धांतिक बातें और प्रतिरोध केवल खोखले शब्द बनकर रह जाएंगे। उनकी प्रसिद्ध आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' (2007) में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है कि उनके बचपन में उनकी माँ ने उन्हें जो सबसे बड़ा और व्यावहारिक मंत्र दिया था वह था

''तुम लोग रुपया जरूर कमाना, अपने पैरों पर खड़ी होना'' ।

यही वह मूल सिद्धांत था जिसे उन्होंने अपने उपन्यासों की नायिकाओं के चरित्र निर्माण में पूरी तरह लागू किया। उनका मानना था कि स्त्रियों को न्याय और मुक्ति की अपेक्षा पुरुषों से नहीं करनी चाहिए, क्योंकि पुरुष स्वयं उस शोषक पितृसत्तात्मक व्यवस्था का सर्जक और अभिन्न अंग है। वे स्पष्ट लिखती हैं–''मैं अब स्वावलंबन को ही अपनी मुक्ति मानती हूँ... सजा देनेवाला पुरुष? तुम्हारे हक में लड़नेवाला पुरुष... अपनी लड़ाई आप लड़ने की सामर्थ्य का सशक्त दस्तावेज भी है।''[6]

'छिन्नमस्ता' की प्रिया का चरित्र इस आर्थिक संघर्ष और स्वावलंबन का सबसे ज्वलंत उदाहरण है। वह अपने पारिवारिक और वैवाहिक जीवन की अमानवीय घुटन और अपने पति के शोषण से बाहर निकलकर व्यापार के अत्यंत प्रतिस्पर्धी क्षेत्र में कदम रखती है।''[7] पुरुष–वर्चस्व वाले कॉर्पोरेट जगत में वह अपनी कुशाग्र बुद्धि और अथक परिश्रम से एक सफल व्यवसायी बनकर उभरती है। प्रिया का यह सफर केवल आर्थिक सफलता या धन कमाने का सफर नहीं है, बल्कि यह उसके स्वत्व की खोज, उसके आत्मसम्मान की पुनर्स्थापना और पितृसत्तात्मक सत्ता के पूर्ण नकार का सफर है। जब स्त्री पैसा कमाती है, तो वह केवल आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं होती, बल्कि वह निर्णय लेने की वह सत्ता भी हासिल कर लेती है जिससे उसे सदियों से वंचित रखा गया था।

मनोवैज्ञानिक अंतर्द्वंद्व देह–विमर्श और वैश्विक पितृसत्ता का अंकन

प्रभा खेतान के उपन्यासों की एक अत्यंत महत्वपूर्ण और मौलिक विशेषता यह है कि वे स्त्री के संघर्ष को केवल बाह्य परिस्थितियों (आर्थिक निर्भरता या सामाजिक रूढ़ियों) तक सीमित नहीं रखतीं, बल्कि वे उसके अंतर्मन, उसके मनोवैज्ञानिक अंतर्द्वंद्वों उसकी अव्यक्त कामुकता और दैहिक आवश्यकताओं के नग्न यथार्थ को भी पूरी निर्भीकता से प्रस्तुत करती हैं।[8] पारंपरिक भारतीय समाज में स्त्री की देह को सदैव पुरुष के सम्मान, परिवार की इज्जत या 'पवित्रता' के प्रतीक के रूप में देखा गया है, जिसके कारण स्त्री स्वयं अपनी देह, अपनी जैविक आवश्यकताओं और अपनी इच्छाओं के प्रति एक स्थायी अपराधबोध से ग्रसित रहती है। 'अपने–अपने चेहरे' और 'छिन्नमस्ता' की नायिकाएँ इस सामाजिक दमन, कुंठा, काम–अतृप्ति और हीनता ग्रंथि से निरंतर जूझती हैं। प्रभा खेतान ने स्त्री के मनोवैज्ञानिक आयाम यथा हताशा, तनाव, विवाह रहित यौन जीवन, विवाहेतर प्रेम संबंध और संबंधों में अलगाव बोधका अत्यंत सूक्ष्म, विश्लेषणात्मक और साहसिक अंकन किया है।

कृष्णा सोबती ने जहाँ अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'मित्रो मरजानी' के माध्यम से स्त्री के मांसल रूप और उग्र कामेच्छा को पहली बार मुखर अभिव्यक्ति दी थी, वहीं प्रभा खेतान ने इस देह–विमर्श को एक बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक धरातल प्रदान किया। उनके पात्र अपनी कामेच्छाओं और मानसिक ग्रंथियों में केवल उलझते ही नहीं, बल्कि एक तार्किक सोच और आत्ममंथन के द्वारा उन मानसिक कारागृहों से बाहर निकलते हुए भी दिखाई देते हैं। लेखिका का स्पष्ट मत है कि देह पर स्त्री का स्वयं का अखंड अधिकार होना चाहिए, और देह की स्वतंत्रता और उस पर आत्मनिर्णय के बिना समग्र स्त्री–मुक्ति की कोई भी परिकल्पना पूरी तरह से बेमानी है।

इसके अतिरिक्त, प्रभा खेतान ने 'आओ पेपे घर चलें' (1990) में इस तथ्य को बहुत प्रमुखता से रेखांकित किया है कि पितृसत्ता का दमनकारी और शोषक स्वरूप केवल भारतीय, एशियाई या मारवाड़ी समाज तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक निर्विवाद वैश्विक सत्य है। ब्यूटी थेरेपी का कोर्स करने हेतु अपने अमेरिका प्रवास के दौरान उनके प्रत्यक्ष अनुभवों पर आधारित इस उपन्यास में आइलिन, मिसेज डी, हेल्गा और

केथरीन जैसी महिलाएँ आर्थिक रूप से अत्यधिक संपन्न और स्वतंत्र होने के बावजूद गहरे दुःख और मनोवैज्ञानिक अवसाद से घिरी हुई हैं। उपन्यास की एक 70 वर्षीय कैंसरग्रस्त महिला आइलिन अपने जीवन के दो पतियों और पाँच प्रेमियों से मिले धोखे, मानसिक संताप और शारीरिक शोषण को भुलाने के लिए अपने पालतू कुत्ते 'पेपे' को अपना बेटा मान बैठती है। वह मनुष्य (विशेषकर पुरुषों) से इस कदर निराश और हताश हो चुकी है कि वह अब जानवरों में इंसानी प्यार और वफादारी तलाशने को विवश है। यह उपन्यास इस बात का जीता–जागता प्रमाण है कि पूंजीवादी और कथित रूप से विकसित पाश्चात्य समाज में भी स्त्री वस्तुकरण और भावनात्मक शोषण से मुक्त नहीं है, और वहाँ भी उसे अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़नी पड़ती है।

'छिन्नमस्ता' का रूपकः 'सती' से 'शक्ति' तक की विद्रोही स्त्री–यात्रा

प्रभा खेतान के साहित्य में 'छिन्नमस्ता' (1993) उपन्यास का स्थान अत्यंत विशिष्ट है। 'छिन्नमस्ता' वास्तव में तांत्रिक परंपरा की दस महाविद्याओं में से एक उग्र देवी का नाम है, जो अपना ही मस्तक स्वयं काटकर अपने ही रक्त की धाराओं से अपनी सहचरियों को पोषित करती हैं। उपन्यास में यह तांत्रिक शीर्षक एक अत्यंत मारक रूपक के रूप में कार्य करता है। प्रिया को समाज, परिवार और रूढ़िवादी परंपरा द्वारा थोपी गई 'सती' या 'आदर्श और आज्ञाकारी पत्नी' की छवि का त्याग करना पड़ता है। 'छिन्नमस्ता' बनने की यह प्रक्रिया वास्तव में अपने ही पारंपरिक, संस्कारित और आज्ञाकारी 'मस्तिष्क' (सोच) को काट फेंकने की वैचारिक प्रक्रिया है। पितृसत्तात्मक समाज हमेशा एक ऐसी स्त्री का महिमामंडन करता है जो सब कुछ सहकर भी मौन रहे (सती)। किंतु प्रिया इस मिथक को तोड़कर 'शक्ति' का रूप धारण करती है। वह अपना 'मस्तक' (यानी वह सोच जो उसे पुरुष पर निर्भर रहना सिखाती थी) काटकर फेंक देती है और अपनी स्वतंत्र अस्मिता का निर्माण करती है। इस उपन्यास के माध्यम से प्रभा खेतान ने पारंपरिक धार्मिक प्रतीकों का विखंडन किया है और उन्हें एक उग्र नारीवादी स्वर प्रदान किया है, जो परम्पराओं के प्रति प्रतिरोध का एक अद्वितीय साहित्यिक प्रयोग है।

आत्मकथ्यात्मक प्रतिरोधः 'अन्या से अनन्या' में व्यक्तिगत यन्त्रणा और विश्व–भगिनीवाद

यद्यपि 'अन्या से अनन्या' (2007) एक उपन्यास न होकर प्रभा खेतान की बहुचर्चित आत्मकथा है, तथापि उनके उपन्यासों में निहित प्रतिरोध के गहरे स्वरों को इस कृति के संदर्भ के बिना पूरी तरह नहीं समझा जा सकता। उनकी यह आत्मकथा उनके सम्पूर्ण औपन्यासिक साहित्य की वैचारिकी की आधारशिला और उद्‌गम स्थल है।

प्रभा खेतान ने अपने जीवन का एक बहुत बड़ा और महत्वपूर्ण हिस्सा एक विवाहित पुरुष (डॉ. सर्राफ) के साथ 'दूसरी औरत' के रूप में व्यतीत किया। एक पारंपरिक, संभ्रांत और रूढ़िवादी मारवाड़ी समाज में इस प्रकार का जीवन व्यतीत करना अपने आप में एक भयंकर दुस्साहस और सामाजिक रूढ़ियों के प्रति सबसे बड़ा विद्रोह था। उन्होंने समाज के उस घिनौने दोहरे चरित्र को बेनकाब किया जो एक पुरुष के विवाहेतर संबंधों को तो आसानी से स्वीकार कर लेता है या उसे उसकी 'मर्दानगी' मानकर अनदेखा कर देता है, परंतु उसी रिश्ते में शामिल स्त्री को सामाजिक बहिष्कार, चारित्रिक और तिरस्कार का दंश झेलने पर विवश कर देता है।

इस जटिल रिश्ते में उन्होंने वह सब कुछ भोगा और अनुभव किया जो उनकी उपन्यासों की नायिकाएँ अनुभव करती हैं सच्चे प्यार की तड़प, रिश्ते को सामाजिक वैधता न मिलने की गहरी पीड़ा, हर कदम पर अपमान, और पुरुषवादी अहम् से निरंतर टकराव । डॉ. सर्राफ द्वारा अक्सर उनके व्यावसायिक उत्साह और सफलता पर व्यंग्य किया जाता थाः "तुम आदमियों जैसी होती जा रही हो। तुम्हें सिर्फ नफे–नुकसान की चिंता रहती है"। यह टिप्पणी केवल एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि उस पूरी पुरुषवादी मानसिकता की परिचायक है जो एक स्त्री की व्यावसायिक सफलता और महत्वाकांक्षा को पचा नहीं पाती, और उसे 'पुरुष जैसी' कहकर उसकी स्त्रीत्व को खारिज करने का ओछा प्रयास करती है। इसके बावजूद प्रभा खेतान ने अपने प्रेम और अपने व्यवसाय दोनों को पूरी शिद्दत से जिया। उन्होंने उस 'सौंदर्यशास्त्र' को पूरी तरह से तोड़ दिया जो औरतों से यह अपेक्षा करता है कि वे अपने शारीरिक शोषण, अपने अनैतिक माने जाने वाले संबंधों या अपनी मानसिक इच्छाओं को समाज से छिपा कर रखें। उनके वैचारिक मानस पर कलकत्ता में वामपंथ के उभार, पुलिस आतंक और 1968 के विश्व बैंक के खिलाफ हुए सामाजिक आंदोलनों का भी बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था। उन्होंने समाज में मालिक–मजदूर संघर्षों को बहुत करीब से देखा और यह महसूस किया कि राजनीतिक सत्ता और सामाजिक शोषण का एक बहुत गहरा और शातिर गठजोड़ है। इस गहन अनुभव ने उनके अस्मिता–निर्माण को केवल एक निजी या मध्यवर्गीय स्त्री की लड़ाई नहीं रहने दिया, बल्कि इसे 'विश्व–भगिनीवाद' के एक व्यापक और समावेशी फलक तक विस्तृत कर दिया, जहाँ हर शोषित स्त्री का दर्द उनका अपना दर्द बन गया।

संदर्भः–

[1]. खेतान, पी. पीली आँधी, नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन. प्र0सं0 2016, पृ. 197

[2]. खेतान, पी. अपने–अपने चेहरे. नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, प्र. सं.2016, पृ. 47

[3]. खेतान, पी. अपने–अपने चेहरे. नई दिल्ली: किताबघर प्रकाशन. प्र. सं. 2013, पृ.104

[4]. खेतान, पी. पीली आँधी, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. प्र. सं. 2016, पृ.16

[5]. खेतान, पी. छिन्नमस्ता, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. प्र. सं. 1993, पृ0 77

[6]. खेतान, पी. अन्या से अनन्या, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. प्र. सं. 2007, पृ. 257

[7]. खेतान, पी. छिन्नमस्ता, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. प्र. सं. 1993, पृ. 177

[8]. खेतान, पी. पीली आंधी, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. प्र. सं. 1996, पृ. 47

Cite this Article:

*प्रो0 अनुपमा चतुर्वेदी, प्रीति सिंह, “**प्रभा खेतान का रचना–संसार और स्त्री विमर्श की दार्शनिक सैद्धांतिकी**”, **International Journal of Humanities, Commerce and Education**, **ISSN**: 3108-0456 (Online), Volume 1, Issue 4, pp. 50-54, December 2025.*

Journal URL: *https://ijhce.com/*

DOI: *https://doi.org/10.59828/ijhce.v1i4.22*